लोकजीवन के चितेरेः त्रिलोचन

डॉ. ओमप्रकाश शुक्ल
गुजरात कॉलेज(सायं),अहमदाबाद

साहित्य के विविध वादों, विवादों,बाजारवाद और वैश्वीकरण ने रचनाधर्मिता की दिशा में केवल परिवर्तन ही नहीं किया अपितु उसकी प्रासंगिकता पर भी प्रश्नचिह्न खड़ा कर दिया। कइयों को मिट्टी की गंध से उबकी आने लगी,तो कइयों ने अपनी अज्ञानता को छिपाए रखने के लिए शोर-शराबे में शामिल हो जाना ही मुनासिब समझा । दादुरों की टर्र-टर्र कब और कहाँ नहीं होती ? त्रिलोचन का कवि इन सबके बीच अपनी राह पकड़े अकेला चलता रहा । त्रिलोचन अपने प्रथम काव्य संग्रह धरती से लेकर - तक मिट्टी से जुड़े रहे । त्रिलोचन की कविता में धरती है, धरती मे जुड़े लोग हैं, माटी की सौंधी महक है, प्रकृति है जीवन है । त्रिलोचन उस जनपद के कवि हैं जो भूखा-दूखा है, अभी शहर में तब्दील नहीं हुआ है . त्रिलोचन की कविता में लाग-लपेट नहीं है, दिमागी कसरत नहीं है । कला की अपेक्षा भाव ही विशेष रहा है - "मुझे वह रूप नहीं मिला है जिसमें कोई / सुंदर कहलाता है, हृदय मिला है / जिसमें मनुष्यता का निर्मल कमल खिला है ।" त्रिलोचन की कविता में गाँव है, खेत है, पोखर है, दुख-दर्द की सहज अनुभूति है, किंतु "इसमें लोकगीत नहीं है, जैसाकि विद्यानिवास मिश्र में ; इसमें गाँव की गलीज को ढोने का तुफैल भी नहीं है, जैसाकि शैलेश मटियानी में; इसमें बिच्छल डगर का रूमान भी नहीं है, जैसा रेणु में है ; यहाँ सिर्फ एक देहाती पोखर है, कंकड़ीली जमीन में धँसा हुआ, जिसमें स्वच्छता और ठण्डक है, कहीं जलकुंभी और कुईं नजर नबीं आती, कुछ सेवार जरूर जिन्हें शास्त्री सुनहले शैवालों में बदलने की कला नहीं जानते ।"[1]

त्रिलोचन की कविता नए काव्यशास्त्र की मांग भले ही ना करती हो,किन्तु नए काव्य सौंदर्य का सृजन अवश्य करती है । उनकी कविता में अभिव्यक्ति की सहजता है । किसी सिद्धांत या वाद के ढाँचे में उनकी कविता को फिट नहीं किया जा सकता । कविता की मुक्ति का ढर्रा त्रिलोचन का अपना है । लोकजीवन में कहीं कुछ भी करीने से सजाया हुआ नहीं होता। कवि ने तो कविता लोक सीखी है । उनकी कविता में नगई महरा, चम्पा, भोरई केवट, फेरू, रामचन्दर, शिवटहल,

सुकनी बुढ़िया किसी वर्ग विशेष का ही प्रतिनिधित्व नहीं करते, ग्राम-जीवन के विविध अनुभवों को ये चरित्र बिल्कुल सादगी से अभिव्यक्ति देते हैं । त्रिलोचन ने "अहा ग्राम्य जीवन " की बात नहीं कही है, चीर भरा पाजामावाला जनपदीय व्यक्ति कह भी कैसे सकता है ? देहाती जीवन के कुछ दृश्य बानगी के तौर पर दृष्टव्य हैं-

" अभी हुक्के पुड़-पुड़ कर
बजे,उठाकर धूम, रंग आँखों में आया
हँसिए में उत्साह, नया पहँटा वह सलटा,
कुछ मालूम हुआ न, उधर से गीत कढ़ाए
मजूरिनों ने आम और मद से बौरैया
कटहल की अरघान उड़ी" [2]

अब पक कर तैयार है
रंग बदल गए हैं/मटर उखड़ रही है
जौ खड़े हैं,हवा में झूम रहे हैं / फूले हैं पलाश,वैजयंती,कचनार,आम"[3]

त्रिलोचन की कविता में रामायण का मर्म और महत्व जानने वाला अनपढ़ देहाती नगई महरा है, कलकत्ते पर बजर गिरने की कामना करने वाली अनपढ़ चम्पा है, खेत की सिंचाई करते किसान दम्पति हैं,घमौनी करती गाय है,बँसवारी-महुवारी की शोभा है । 'अहा ! ग्राम्य जीवन भी क्या है ' वाली बात यहाँ नही है,पूर्वआयोजित गाँव भी यहाँ नहीं है । कवि ने गाँव की यथास्थिति पर मुलम्मा नहीं लगाया है । उसने देखा कि नगई महरा ने अपने सगे भाई की सासु को घर बैठा लिया तो उसे डाँड़ भरना पड़ा । फेरू भी नगई की बिरादरी का है। वह ठकुराइन को लेकर चला गया,कुछ दिनों बाद लौटने पर ठकुराइन ने यह बताया कि वे काशी निवास करने गई थीं । य़हाँ मामला ठकुराइन का है । बेचारा फेरू - सब सुना करता है।

त्रिलोचन का गाँव 'गंगा मइया कइ चित्त धरे भरोस ' और 'पान खाइ सड़के पइ मारइँ पीकि ' की मानसिकता एवं परिवेश में जी रहा है । यहाँ 'नवा नवा खुरपेच,नई खुरचाल' नई बात नहीं है । 'अमोला' तो ग्राम्य जीवन और ग्राम्य अनुभव का दस्तावेज है । गाँवों में खानाबादोश जातियाँ और असह्य गरीबी में

जिन्दगी जीने के लिए अभिशप्त लोगों से त्रिलोचन का नाता रहा है। ये लोग कछुआ, मेघा, खरगोश, लोमड़ी आदि का शिकार करके किसी तरह पेट भरते हैं ।

आती पाती गहदाला से टारि
कछुआ मेघा मुसहर लेई निकारि
दोना पतरी बनवइँ बेचइँ जाइ
इहइ धइ रहे मुसहर अभहिउँ आइ
नट कुकुरन लइ लइ हेरइँ सेन्हुआरि
आने लखै न मिलइ बिना तकरारि ।[4]

पढ़-लिखकर लोग विकास कर सकते हैं, होशियार हो सकते हैं, लेकिन भलमनई नहीं बन सकते। यह किसी विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम या स्कूल में पढ़ाने का विषय नहीं है । कवि ने अनुभव किया है- सुई जइसे तागइ डोबइ डोब, तेइसइ आ मनई से मनई होब । गाँवों में आज भी औरतें भेंट-अकुवार भेजा करती हैं, औरतें आपसचार निभाना बखूबी जानती हैं -

मेहरारू धई राखैं आपसचार,
कहिके पठवा करइँ भेंट अकुवार ।[5]

वर्तमान शहरी संस्कृति इससे बिल्कुल अनजान है । गाँवों में सब कुछ अच्छा है, ऐसा भी नहीं है अमोला में कवि ने मानव-जीवन के तमाम पहलुओं को उसके उत्स में देखा है । मजदूर, किसान की जिन्दगी और उसकी समस्याओं को त्रिलोचन यदि लोक के परिप्रेक्ष्य में देख सके हैं तो इसका कारण गाँव और आम आदमी से जीवंत सरोकार और उनकी खुद की परिस्थितियाँ रही हैं ।

चम्पा काले काले अच्छर नहीं चीन्हती किन्तु कलकत्ते पर बजर गिरने की कामना करती है । उत्तर भारत में विदेशिया लोकगीत का एक प्रकार है । पुरुष कमाने के लिए विदेश या परदेश जाता था तो पत्नी को संदेह रहता कि उसका पति सही सलामत घर लौट कर आयेगा या नहीं ? कहीं वह किसी दूसरी औरत के फंदे में ना पड़ जाए ! पढ लिख कर लोग सामाजिक और जिम्मेदार हो जाते हैं ऐसी बात होती तो चम्पा भी पढ़ना-लिखना या कागद गोदने को बुरा ना मानती । कलकत्ता जैसे महानगर गाँवों को निगलते जा रहे हैं । शहरीकरण को जन्म देनेवाले ये पढ़े-लिखे लोग ही हैं, ये लोग स्वयं को ग्रामीणों की अपेक्षा सभ्य और होशियार मानते हैं । चम्पा ऐसी महानगरीय सभ्यता पर बजर गिराना चाहती है ।

परदेशी के नाम पत्र लोकगीतों की तरह नपे तुले शब्दों में बहुत कुछ कह देने वाली कविता है । अमोला का बड़ा होना, बछिया का कोराना, भैंस ब्याना आदि घटनाएँ समझदार के लिए इशारा है ।

त्रिलोचन गाँवों से जुड़े रहे, भ्रमण भी खूब किया । उनका जीवन-अनुभव विशाल है । केदारनाथ सिंह को दिए एक साक्षात्कार में उन्होंने बताया है कि कविता मैंनें लोक से सीखी है, पुस्तक से नहीं । 'भौजी' सॉनेट में गाँव का परिवेश लोगों की आत्मीयता तीज-त्योहार की रंगत आदि का वर्णन हुआ है । होली पर भाभी अपने देवर - दोनों रंग-गुलाल खेलते हैं... । नैरेटर(कवि) छोटा था, गाँव में भैजी ने एक बार निर्दोष हँसी-मजाक करते हुए गुदगुदाया था, मिठाई खिलायी थी - वर्षों पर किसी होली पर वह रंग डालती है - 'कर दी अपने मन की रंग दी कनई से यह काया' । गाय करती है घमौनी (अरघान) में गाँव के वातावरण की संश्लिष्ट अभिव्यक्ति हुई है । अधलेटी जुगाली करती गाय, चरने के लिए खुली गाय का सुन्दर चित्रण हुआ है । पशु-पक्षियों में सहकार की भावना विशेष होती है । गाय पर उड़ती मक्खियों के कारण कौवे आसपास आ जाते हैं । गाय के बालों एवं कानों में किलनी-जूँ और मैल को ये कौवे साफ कर देते हैं । कवि को पशुओं का यह संबंध बहुत भाता है । वे इससे जो पाते हैं उसे सँजो कर रखते हैं - यह सम्बन्ध चुपके से जो देता है वह सँभाल लेता हूँ मन में, निजी मान के ।

"आँख मूँदे पेट पर सिर टेक
गाय करती है घमौनी बँधी जड़ से "[6]

कोइलिया न बोली(अनकहनी भी कुछ कहनी है) में लोकगीत की ढाल है । छोटी कविता में मानवीय संवेदना की सफल अभिव्यक्ति हुई है। ऋतुएँ आती हैं, जाती हैं, किन्तु अब कोइलिया नहीं बोलती – श्याम की अनुपस्थिति ही शायद इसका कारण है । मनुष्य के रागात्मक सम्बन्धों में बड़ा बदलाव आया है। निर्दोष और समर्पित प्रेम कल्याणकारी था । श्याम प्रेम के वशीभूत थे । जीवन की आपाधापी में श्याम कहीं खो गया है । कोइलिया उसी प्रेम की खातिर बोलती थी.. । कवि ने लोक को आधुनिक संदर्भों और स्थितियों में देखा है–

मँजर गये आम कोइलिया ना बोली
कहाँ गये श्याम कोइलिया ना बोली ।

त्रिलोचन के जीवन-संघर्ष और उससे जूझने की शक्ति लोकजीवन है उनकी कविता का प्राणतत्व लोकजीवन है । वाल्मीकि, तुलसी, जायसी, कबीर, ग़ालिब, निराला की परम्परा को त्रिलोचन ने अपनी कविता में सादर-संयम से स्वीकार किया है । प्रेमचंद ने गद्य के माध्यम से लोक को प्रस्तुत करने का जो कार्य किया उसी परम्परा को आगे बढ़ाते हैं त्रिलोचन । लेकिन इसके साथ-साथ वे परम्परा को वर्तमान संदर्भों और आवश्यकताओं के साथ रख सकें हैं, उनके पात्रों द्वारा अपने ढंग से-गँवई सूझ से दिए गए उत्तर इसका प्रमाण हैं- नगई और चम्पा ।

किसानों और मजदूरों से कवि बतियाता है । उसकी पीड़ा विवशता और छटपटाहट से वह रूबरू होता है, उससे जुड़ता है । कवि की सम्पूर्ण सृजना में धरती, किसान, लोक, मजदूर आदि केन्द्र में रहे हैं । कवि ने उन्हें बिना मुलम्मा लगाए स्वीकार किया है :

"मैं तुम्हारे खेत में तुम्हारे साथ रहता हूँ
जब तुम किसी बड़े या छोटे कारखाने में
कभी काम करते हो.....
मैं तुमसे, तुम्हीं से, बात किया करता हूँ
और यह बात मेरी कविता है ।"[7]

'नगई महरा' में जाति व्यवस्था, समाज-व्यवस्था एवं उसकी आवश्यकता के साथ श्रम की महत्ता पर भी प्रकाश डाला गया है । कवि ने केवल किसान या मजदूर को ही अपनी कविता का विषय नहीं बनाया है, 'नगई महरा' इसका मिलाजुला और कुछ हटकर सर्जन है । इस संदर्भ में डॉ. नामवरसिंह का कथन उपयुक्त है - 'ताप के ताए हुए दिन' में किसी पिछड़े किसान की अपेक्षा आधुनिक समाज के झुलसे हुए इन्सान की इन्द्रियाँ खुल खेलती है ।'[8]

'ताप के ताए हुए दिन ये
क्षण के लघु मान से
मौन नपा किए ।'[9]

'नगई महरा' कविता में नगई अपने ढंग से जीवन जीने के साथ समाज को साथ लेकर चलता है । घरौवावाली पत्नी और उसके बच्चे को वह अपनाता है, पूरा परिवार मेहनत-मजदूरी करता है । कवि ने नगई के चरित्र के माध्यम से सर्वहारा वर्ग की प्रगतिशील चेतना को उभारने का प्रयास किया है। त्रिलोचन के पहले काव्य संकलन धरती में किसान जीवन से सम्बद्ध एक गीत है 'मिल कर वे दोनों प्रानी / दे रहे खेत में पानी ।' [10] नगई महरा और उसकी पत्नी किसान कम, मजदूर और स्वरोजगारी अधिक हैं। यह एक विघटन की प्रक्रिया है । प्रेमचन्द का 'होरी' किसान से मजदूर बनने के लिए विवश हो गया । मजदूरी भी समस्या का समाधान नहीं है । स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सरकार ने स्वरोजगार पर बल दिया । किसानी, मजदूरी और जीवनोपार्जन के तमाम माध्यम मनुष्य की प्रगति एवं विकास के परिचायक हैं । धरती (1945) और ताप के ताए हुए दिन (1980) के बीच के अन्तराल में इन बातों को भी समझना चाहिए है।

संदर्भः

[1] त्रिलोचनःकिंवदंती पुरुष(संपा. महावीर अग्रवाल), प्रभाकर श्रोत्रीय परिसंवाद में,पृ.290

[2] शब्द,पृ.6

[3] चैती,पृ.27

[4] अमोला से

[5] अमोला से

[6] अरघान पृ.27

[7] (ताप के ताए हुए दिन, पृ.60-61)

[8] शब्द, पृ.53

[9] (ताप के ताए हुए दिन, पृ.27)

[10] अनकहनी भी कुछ कहनी है, पृ.97